रूसी कहानी

मिख़ाइल बुल्गाकोव

# इस्पात का गला

# इस्पात का गला (रूसी कहानी) : मिख़ाइल बुल्गाकोव

## इस्पात का गला (रूसी कहानी) : मिख़ाइल बुल्गाकोव

## Ispaat Ka Gala (Russian Story) : Mikhail Bulgakov

अच्छा, तो फिर मैं अकेला रह गया था। मेरे चारों ओर था नवम्बर महीने का अन्धकार, चक्करदार बर्फ की आँधियाँ, घर बर्फ से लद गया था, पाइपों व चिमनियों से साँय-साँय की आवाज़ आ रही थी। अपने जीवन के सारे चौबीस वर्ष मैंने बहुत बड़े शहर में बिताये थे और मैं सोचता था कि बर्फ के तूफ़ान सिर्फ़ उपन्यासों में आते हैं, लेकिन अब पता चला था कि बर्फ के तूफ़ान वास्तव में साँय-साँय करके दहाड़ते हैं। शामें यहाँ असाधारण लम्बी होती हैं। नीले रंग के शेड के नीचे वाला बल्ब धुंधली-सी खिड़की में प्रतिबिम्बित हो रहा था, और अपने बाँये हाथ के उस तरफ़ चमकते इस धब्बे को देख मैं सपनों में खो गया। मैं ज़िले के शहर के सपने देख रहा था, जो मेरी नियुक्ति वाले गाँव से चालीस विर्स्तें (विर्स्ता- 1.06 कि.मी. या 3500

फीट-अनु.) दूर था। मुझे वहाँ भाग जाने की उत्कट इच्छा हो रही थी। वहाँ बिजली थी, चार और डॉक्टर थे, उनसे सलाह-मशविरा किया जा सकता था, जो भी हो वहाँ की हालत उतनी भयानक न थी। लेकिन भाग जाने की कोई गुंजाइश नहीं थी और कभी-कभी मैं खुद ही समझ जाता था कि यह कायरता है। आखिर इसलिए ही तो मैंने चिकित्सा शिक्षा पायी थी...

...क्या होगा अगर किसी गर्भवती औरत को लाते हैं और यह प्रसव का एक अति जटिल मामला हो? या मान लो किसी ऐसे मरीज़ को लाते हैं, जिसकी आँत नीचे उतरकर फट गयी हो? तो मैं क्या करूँगा? मेहरबानी करके बताइए! केवल अड़तालीस दिन पहले मैंने डॉक्टरी की पढ़ाई ख़ास विशिष्टता के साथ पास की है, लेकिन विशिष्टता अपनी जगह है और हर्निया अपनी जगह। एक बार मैंने प्रोफेसर साहब को हर्निया का ऑपरेशन करते देखा था। वे ऑपरेशन कर रहे थे और मैं ऑपरेशन कक्ष में बेंच पर बैठा था। बस इतना ही..."

हर्निया के केवल विचार मात्र से मुझे पसीने छूट जाते थे और इस ठण्डे पसीने की धाराएँ कई बार रीढ़ की हड्डी के स्तम्भ के साथ-साथ नीचे उतरती थीं। हर शाम को खूब चाय पीकर मैं एक ही पोज़ में बैठता था : मेरे बाँयें हाथ की तरफ़ होती थीं सारी प्रसूति-प्रदर्शिकाएँ और दाहिनी तरफ़ होते थे विभिन्न प्रकार के दसियों सचित्र खण्ड, शल्य चिकित्सा से सम्बन्धित। मैं कराहता, सिगरेट पीता, काली ठण्डी चाय पीता...

और एक बार मेरी आँख लग गयी : मुझे अच्छी तरह याद है वो रात 29 नवम्बर की, दरवाजे पर की जोरदार धाइधाड़ से मेरी नींद खुली। लगभग पाँच-एक मिनट बाद पतलून पहनते हुए भी मरी याचनापूर्ण आँखें शल्य चिकित्सा की उन दैवी किताबों पर ही गड़ी हुई थीं। मैंने स्लेज की पटरियों की चर्र-चर्र सुनी : मेरे कान ख़ास ही तेज़ हो गये। सम्भवतः उतरी आँत से भी भयानक निकले बात। रात के ग्यारह बजे मेरे पास निकोलस्क्या के चिकित्सा केन्द्र पर एक छोटी लड़की लायी गयी। परिचारिका ने दबी आवाज़ में बताया :

"लड़की बहुत कमज़ोर है, मर रही है... कृपा कीजिए, डॉक्टर, अस्पताल चलिए।"

याद है, मैंने अहाता पार किया, अस्पताल के मुख्य प्रवेश द्वार के पास मिट्टी के तेल से जलने वाले दीये की ओर जा रहा था, मानो किसी ने जादू कर दिया हो मुझ पर, ऐसे में देखता रहा टिमटिमाते दीये की तरफ़। स्वागत कक्ष प्रकाशित था और मेरे सहायकों का पूरा दल चोगे पहने मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। ये थे : चिकित्सा-सहायक ज़िम्यान लूकिछ, अभी जवान, परन्तु अत्यन्त कुशल व प्रतिभा सम्पन्न, व दो अनुभवी दाइयाँ-आन्ना निकालाएन्ना व पिलागिया इवानव्ना। मैं तो था मात्र चौबीस वर्ष का डॉक्टर, जिसकी दो मास पूर्व स्नातकीय दीक्षा के उपरान्त निकोलस्कया अस्पताल के संचालक के रुप में नियुक्ति की गयी थी।

चिकित्सा सहायक ने गम्भीरतापूर्वक दरवाज़ा खोला, मरीज़ लड़की की माँ प्रकट हुई, नमदे के बने लम्बे बूटों पर फिसलते हुए वह इतनी तेज़ी से अन्दर आयी मानों उड़कर आयी हो। उसकी स्कार्फ पर की बर्फ़ अभी पिघली नहीं थी। उसके हाथ में कोई गठरी थी और उस गठरी से सन्-सन्, फूस-फूस की आवाजें आ रही थीं। माँ का चेहरा कुछ विकृत हो गया था, वह रो रही थी निःशब्द। जब उसने अपना ओवरकोट (भेड़ की खाल का बना) और स्कार्फ उतार डाला और गठरी खोली तो मुझे तीन एक साल की लड़की दिखायी दी... मैंने उसकी तरफ़ देखा, वह दतनी सुन्दर थी कि कुछ समय के लिए शल्य चिकित्सा, अकेलापन, कहीं काम न आने वाला विश्वविद्यालय में पाया ज्ञान, सब कुछ भूल गया मैं। किससे करें उसकी तुलना? कैसी लग रही थी वो? केवल चॉकलेट के डिब्बों पर बनाते हैं ऐसे बच्चों के चित्र, जिनके बाल प्राकृतिक धुंघराले होते हैं और गेहूँ की बाली के समान सुनहरे होते हैं। नीली बड़ी-बड़ी आँखें, गुड़िया जैसे गाल। देवदूतों की तस्वीरें बनाते हैं इस प्रकार। लेकिन उसकी आँखों की तह में एक अजीब अँधेरा था। मैं समझ गया कि यह भय के कारण है। वह साँस नहीं ले पा रही थी। “एक घण्टे में यह मर जाएगी" मैंने सोचा निश्चित भाव से, और मेरा हृदय दर्द के मारे सिकुड़ गया...

हर साँस के साथ बच्ची के गले में गड्ढे पड़ रहे थे, नसें फूल रही थीं, और उसका गुलाबी चेहरा हल्का नीला पड़ रहा था। इस रंग को मैं एकदम पहचान गया और उसका नतीजा सोचा। मैं तुरन्त

समझ गया कि क्या बात है और मैंने अपने जीवन का पहला निदान किया, एकदम सही, और ख़ास बात यह है कि निदान मैंने यह दाइयों ने एक ही साथ किया-वे तो तजुरबेकार थीं : “बच्ची को डिफ्थीरिया हो गया है, गला झिल्लियों से भर गया है, और शीघ्र ही पूरी तरह बन्द हो जाएगा।"

“कितने दिन से बीमार है?" अपने सहायकों की चौकन्नी चुप्पी के बीच मैंने पूछा।

“पाँचवाँ दिन है, पाँचवाँ।” माँ ने बताया व अपनी सूखी आँखों से गम्भीरतापूर्वक मेरी तरफ़ देखा।

“डिफ्थीरिया।" दाँत भींचते हुए मैंने चिकित्सा-सहायक को बताया व माँ को बोला, "तू क्या कर रही थी इतने दिन? क्या सोच रही थी?" ।

और इसी समय मेरे पीछे से रोती आवाज़ आयी : “पाँचवाँ है, मालिक, पाँचवाँ।"

मैं पीछे मुड़ा व मुझे दिखायी दी एक चुपचाप, गोल चेहरेवाली बूढ़ी औरत, सिर पर स्कार्फ बाँधे हुए, “अच्छा होता अगर दुनिया में ये बूढ़ियाँ बिल्कुल न होतीं।" ख़तरे के पूर्वाभास की उदासी में मैंने सोचा और कहा, “तू चुप कर, बुढ़िया, बाधा डाल रही है।" माँ को फिर कहा-"क्या सोच रही थी? पाँच दिन तक? हाँ?"

माँ ने अचानक यन्त्रवत बच्ची को बुढ़िया को दे दिया और वह मेरे आगे घुटनों पर बैठ गयी।

“उसे दवाई दो।" उसने कहा व ज़मीन पर सिर पटका, “अगर बच्ची मर गयी तो मैं फाँसी लगा लूंगी।"

"खड़ी हो जाओ तुरन्त।" मैंने जवाब दिया, "वरना मैं तुमसे बात तक नहीं करूँगा।"

माँ एकदम खड़ी हो गयी, घेरदार ढीले घाघरे को सरसराते हुए, उसने बुढ़िया से बच्ची को ले लिया और झुलाने लगी। बुढ़िया अपने सामने क्रॉस बनाकर प्रार्थना करने लगी, और बच्ची साँप के समान फुसफुस करते हुए साँस ले रही थी। चिकित्सा-सहायक ने कहा, “वे सब ऐसे ही करती हैं, ज-न-ता" और उसकी मूंछे एक तरफ़ झुक गयीं।

"क्या मलतब है, मर जाएगी वह", मेरी ओर देखते हुए, जैसा मुझे लगा, आग बबूला होते हुए माँ ने पूछा।

"मर जायेगी," धीरे से लेकिन मज़बूती से कहा मैंने।

बुढ़िया ने उसी वक्त घाघरे का पल्ला उठाया और उससे आँखें पोंछने लगी।

..........

काफ़ी तजुरबेकार थी, तेज़ी से झपटी सहायक की ओर व उसके हाथ से अंकुड़े को छुड़ा लिया, जिसके बाद उसने दाँत भींचकर कहा :

“जारी रखिये, डॉक्टर..."

सहायक धम्म से गिर पड़ा, लेकिन हमने उसकी ओर ध्यान नहीं

दिया। मैंने छुरी गले के अन्दर घुसायी, उसके बाद चाँदी की नली बिठायी गले में। नली ठीक से घुस गयी, लेकिन लिद्का स्थिर थी, उसने कोई हलचल नहीं की। उसके गले में हवा नहीं जा रही थी, जो कि होना चाहिए था। मैंने गहरी साँस भरी व रुक गया : इसके अलावा कुछ और नहीं था करने को। मैं किसी से माफ़ी माँगना चाह रहा था, अपनी बेवकूफ़ी पर पछताना चाह रहा था कि डॉक्टरी पढ़ने के लिए प्रवेश लिया मेडिकल कॉलेज में। सन्नाटा छा गया। लिद्का नीली पड़ रही थी। मैं अब सब छोड़कर रोना चाह रहा था कि अचानक लिद्का अजीब-सी भभक उठी, नली से उसने खून के थक्कों का फव्वारा बाहर फेंका और हवा सनसनाती हुई उसके गले में घुस गयी। बाद में बच्ची की साँस चालू हुई और वह रोने लगी। उसी वक्त सहायक उठ खड़ा हो गया, निस्तेज व पसीने से लथपथ, सुस्त व आतंकभरी नज़रों से देखा उसने गले की ओर व उसे सीने में मेरी मदद करने लगा।

मेरी आँखों पर छा गये पसीने के परदे और नींद के बावजूद मुझे दिखायी दे रहे थे दाइयों के खुश चेहरे। और उनमें से एक ने मुझसे कहा : “अरे, क्या बढ़िया ऑपरेशन किया आपने डॉक्टर।"

मुझे लगा कि वह मुझ पर व्यंग्य कस रही है, व मैंने उसकी तरफ़ देखा अविश्वासपूर्ण उदास नज़र से। बाद में दरवाजे खुले व ताज़ी हवा अन्दर आयी। लिद्का को चादर में लपेटकर बाहर लाये व तुरन्त दरवाज़े में माँ प्रकट हुई। उसकी आँखें जंगली

जानवरों की-सी थीं ख़ौफ़ भरी। उसने मुझसे पूछा : “कैसे हुआ?"

जब मैंने उसके शब्दों की आवाज़ सुनी तो मुझे पसीना छूट गया। केवल उस वक़्त मुझे परिस्थिति की गम्भीरता का एहसास हुआ, क्या होता अगर लिद्का टेबल पर ही मर जाती। लेकिन बहुत ही शान्त स्वर में मैंने जवाब दिया :

“शान्ति रखो। जिन्दा है। उम्मीद है जियेगी। जब तक नली नहीं निकालेंगे, बात नहीं कर पायेगी, डरने की कोई बात नहीं है।"

और वही बुढ़िया ज़मीन के नीचे से प्रकट हुई व उसने मेरी ओर, दरवाज़े की ओर व ऊपर की ओर देखकर क्रॉस बनाकर भगवान् का शुक्रिया अदा किया। अब मुझे उस पर गुस्सा नहीं आ रहा था। मुड़कर मैंने लिद्का को कॅम्फर का इंजेक्शन देने का व बारी-बारी उसके पास बैठने का आदेश दिया। उसके पश्चात् अहाते से होकर अपने घर आया। याद है मेरे कमरे में नीली रोशनी थी, दोदेर लाइन की किताब पड़ी थी, अन्य किताबें इधर-उधर बिखरी थीं। मैं बिना कपड़े बदले दीवान की ओर बढ़ा, और दीवान पर लेटते ही मुझे कुछ दिखायी नहीं दे रहा था; गहरी नींद सो गया, सपने भी नहीं देखे उस रात।

एक महीना बीता, फिर दूसरा। मैंने बहुत कुछ देखा, कुछ मरीज़ों की बीमारी लिका के गले से भी भयंकर थी। मैं गले के बारे में तो भूल ही गया था। चारों ओर बर्फ पड़ी थी, दिन-ब-दिन मरीज़ों की तादाद बढ़ती ही जा रही थी। और एक दिन नये

साल के बाद मेरे स्वागत कक्ष में एक औरत आयी बच्ची को साथ लिये। बच्ची को इतने गरम कपड़े पहना रखे थे मानो छोटी-सी अलमारी को कपड़ों से लादा हो। औरत की आँखों में चमक थी। मैंने उसे गौर से देखा व पहचान लिया।

“आहा, लिदका! कैसी हो?"

सब ठीक है।

लिदका के गले पर लपेटे सारे रूमाल निकाल दिये। वह डर के मारे परे हट रही थी, हाथ नहीं लगाने दे रही थी, फिर भी उसकी ठुड्डी उठाकर उसके गले में झाँकने में मैं कामयाब रहा। गुलाबी रंग के गले पर खड़ा कत्थई रंग का निशान था, और दो आड़े निशान टाँकों के।

“सब ठीक है-"मैंने कहा, “अब आने की कोई ज़रूरत नहीं है।"

"धन्यवाद, डॉक्टर, शुक्रिया"- माँ बाली, और लिद्का से कहा : “अंकलजी को शुक्रिया बोलो।"

लेकिन लिद्का को मुझे कुछ भी कहने की ख्वाहिश नहीं थी।

उसके बाद मैंने उसे फिर कभी नहीं देखा। धीरे-धीरे मैं उसे भूल रहा था। मेरी प्रैक्टिस बढ़ती ही गयी। और फिर एक दिन ऐसा आया, जब मैंने एक दिन में एक सौ दस मरीज़ देखे। हमने सुबह नौ बजे शुरु किया व शाम को आठ बजे समाप्त किया। मैंने लड़खड़ाते हुए अपना चोगा उतारा, सीनियर दाई ने मुझे कहा :

“मरीजों की इतनी तादाद के लिए आपको ट्राखिओटोपी का

शुक्रिया अदा करना चाहिए। आपको पता है, गाँवों में क्या कहते हैं? कहते हैं कि आपने मरीज़ लिद्का को मानो उसके गले की जगह इस्पात का गला बिठाकर-सी दिया। इस गाँव के लोग खास जाते हैं लिद्का को देखने। इसे कहते हैं यश, डॉक्टर, मुबारक हो।"

“वैसे ही जी रही है इस्पात के गले के संग?” मैंने जानना चाहा।

"वैसे ही जी रही है। लेकिन आपके क्या कहने, डॉक्टर, आपके हाथों में जादू है। कितने धीरज व शान्ति से करते हैं आप ऑपरेशन। सुन्दर, अति उत्तम।"

“ह-हाँ...देखिए, मैं कभी घबराता नहीं हूँ"-न जाने क्यों मैंने कह तो डाला, लेकिन मुझे यह महसूस हुआ कि थकावट के कारण मैं शर्माने के भी क़ाबिल न था, मैंने केवल आँखें फेर लीं। मैंने विदा ली व घर चला गया। जम के बर्फ पड़ रही थी, हर चीज़ पर छाये जा रही थी बर्फ, दीया जल रहा था, और खड़ा था मेरा घर, अकेला, शान्त व शानदार। और जब मैं घर की ओर बढ़ रहा था, मुझे एक ही चीज़ की तमन्ना थी-सोने की।

अनुवाद : विनय तोटावार